समयसार गाथा-२ (जीव का) अधिकार चलता है कि जीव-जीव... जीव किसे कहें? इसके बहुत विशेषण पहले आ चुके हैं।

उसे उत्पाद-व्यय-ध्रुववाला भी कहा है न भाई ! यह क्या कहा यह ? कि वस्तु है उसकी पर्याय बदलती है। नई नई अवस्था होती है पुरानी अवस्था जाती है, बदलती है न, विचार बदलते हैं, जो बदलती वह उसकी नयी दशा उत्पन्न होती और पुरानी का नाश होता है, और वस्तु है जो अंदर ध्रुव वह कायम रहती है उत्पाद-व्यय-ध्रुव सहित वह तत्त्व जीव है... और वैसे भी कहा न गुणपर्यायवाला (द्रव्य) वह वस्तु जो है। गुण अर्थात त्रिकाली रहनेवाले, यह वस्तु जो है आत्मा अंदर, जो त्रिकाल रहती है इस अपेक्षा से ध्रुव (है), और नयी-नयी अवस्था पलटती है इसलिये पर्याय, पर्याय अर्थात हालत-दशा। वह गुण पर्यायवाला (द्रव्य) वह द्रव्य है। वह समुदाय अभी जीव को सिद्ध करता है। - ऐसा कहा (जीव) दर्शन ज्ञानमय है। ***जयसेनाचार्य की टीका में तो इस प्रकार लिया है जीव है वह निश्चय से अपने आनंद और ज्ञान प्राण से जीता है इसलिये निश्चय जीव।*** वस्तु है न। अस्ति है न। है तो उसकी

अस्ति है ऐसी शक्ति गुण है न। तो आनंद और ज्ञानादि उसके गुण है, उन प्राणों से कायम जीता (है), टिकता है इसलिये हम उसे जीव कहते हैं।

और दूसरी तरह से भी लिया कि, अशुद्धभाव प्राण से जीता है न यह। भावप्राण यह आयु, मन, वचन, काया के योग से जो प्राण है अशुद्धदशा विकारी उसके प्राण से जीता है। टिकता है यह भी एक अशुद्ध निश्चयनय से कहा है और असद्भूत, व्यवहार से दशप्राण से जीता है अथवा जड़, निमित्त है न यह, पांच इन्द्रिय इन्द्रिय आदि तो जड़ पर हैं। उससे जीव (जीता है) - ऐसा असद्भूत व्यवहार से भी कहलाये।

अब अपना यहाँ आया है यहाँ `फिर वह कैसा है', यहाँतक आया है। है ? भाई को बताओ; कैसा है यह जीव ? वस्तु है न तत्त्व है न पदार्थ है। जैसे यह जड़ है, यह जिसप्रकार अस्ति है तत्त्व, इसीप्रकार चैतन्य उसका जाननेवाला ज्ञाता। जानने में आता है इस वस्तु से जाननेवाला भिन्न पदार्थ है। यह भिन्न पदार्थ है उसके सभी विशेषण प्रयोग किये हैं। यह जीव कैसा है ? वह शक्ति और अवस्थावाला है, उत्पादव्ययध्रुववाला है, दर्शनज्ञान स्वरूप है, यहाँ फिर वह कैसा है ? विशेष बात करते हैं।

अन्य द्रव्यों के जो विशेष गुण - वह जीव में (और) अन्य, दूसरे द्रव्य (में) नहीं। यह शरीर, वाणी कहीं जीव में नहीं `अन्य द्रव्यों के' है न ? विशिष्ट जो खास गुण - ऐसा कह कर दूसरे पदार्थ भी सिद्ध किये। आकाश नाम का पदार्थ है कि जो सभी पदार्थों को रहने के लिये जगह देता है। ऐसी एक अरूपी चीज है, बहुत लम्बी वस्तु सिद्ध करने जायें तो समय लगे, आकाश नाम का एक पदार्थ है। उसका गुण अवगाहन है, अवगाहन अर्थात ? उसमें दूसरे पदार्थ रहें - ऐसा गुण को अवगाहन कहते हैं। तो यह अवगाहन गुण आकाश का है। यह आत्मा में नहीं - ऐसा सिद्ध करना है। है ? सूक्ष्म बात है। शुरूआत के श्लोक सूक्ष्म है।

`द्रव्य के जो विशिष्ट (खास) गुण' - अवगाहन-आकाश का अवगाहनगुण। एक धर्मास्ति नाम का तत्त्व है, उसका गति स्वभाव है अर्थात कि जड़-चेतन गति करते हैं उसमें यह धर्मास्ति तत्त्व निमित्त है उसका गति स्वभाव है। एक अधर्मास्ति है। जीव और जड़ स्थिर रहें, अपनी शक्ति से, तब उसमें निमित्तरूप से जो द्रव्य है उसे अधर्म द्रव्य कहते हैं स्थिति। `वर्तना' यह एक काल द्रव्य है। असंख्य कालाणु हैं, जो प्रत्येक पदार्थ बदलता है-परिणमित होता है जो उसमें निमित्तरूप में है, उसे काल द्रव्य कहते हैं, आहा ! है ? और रूपीपना... वर्तना हेतुपना वह काल और रूपी यह जड़ यह शरीर फिर कैसा रूपी है जड़, जिसमें वर्ण, गंध, रस, स्पर्श है रूपीपना वह जड़ का गुण है। यह गुण आत्मा में नहीं।

`उसके अभाव के कारण' दूसरे द्रव्य के जो खास गुण हैं वह गुण आत्मा में अभाव होने के कारण... अरे ! ऐसी बातें है। तत्त्व की वस्तु बहुत महगी हो गई। लोग अभ्यास नहीं करते और बाहर में रूक गये हैं, मूल चीज क्या है ? चैतन्यवस्तु, उससे दूसरे पांच पदार्थ भिन्न हैं, इन पांच पदार्थों के जो खास गुण हैं, उन गुणों का इसमें अभाव है। है ?

`रूपीपनाके अभाव के कारण और असाधारण चैतन्य रूपता अर्थात् ज्ञान स्वभाव के सद्भाव के कारण'... उसका तो चैतन्य जानना देखना यह स्वभाव है। कायमी त्रिकाली जानना और देखना - ऐसा चैतन्य स्वभाव, यह चेतन आत्मा का चैतन्यस्वभाव कायम होने से दूसरे पदार्थ के गुणों का इसमें अभाव है। अपने गुणों का उसमें सद्भाव है। आहाहा ! `चैतन्यरूप स्वभाव के सद्भाव के कारण' आकाश, धर्म, अधर्म, काल और पुद्गल-इन पांच द्रव्यों से जो भिन्न है... चैतन्यवस्तु, यह जगत के पांच पदार्थों से भिन्न है। उससे यह भिन्न जुदा है। आहाहा ! यह है नहीं, शरीररूप है नहीं, दूसरे रूप नहीं, कर्मरूप नहीं, आकाश और धर्म-अधर्मरूप भी आत्मा नहीं। आहाहा ! बहुत सीखना पड़े... अनादिकाल से वास्तविक चीज क्या है और यह किस प्रकार परिभ्रमण करता है, और जन्ममरण का परिभ्रमण बंद कैसे हो, यह चीज कोई अलौकिक है। आहाहाहा !

यहाँ कहते हैं। दूसरे द्रव्यों के जो गुण हैं उनका आत्मा में अभाव है। इन पांच द्रव्यों से वह भिन्न है क्योंकि (उनके) गुण इसमें नहीं इसलिये उन द्रव्यों से भिन्न है। इस विशेषण से एक ब्रह्मवस्तु को ही माननेवालों का निराकरण हुआ। एक ही आत्मा व्यापक है - ऐसा कितने ही मानते हैं, वेदांत, सर्वव्यापक एक आत्मा (मानते हैं) उनका निराकरण हुआ, कहा कि यह बात तुम्हारी गलत है। एक नहीं। (श्रोता :- दूसरे कहते हैं (कि) आप गलत हैं) वह मानें न मानें वस्तु सिद्ध करके तो कहते हैं कि दूसरे पदार्थ में गुण हैं, तो इन गुणोंवाला द्रव्य है। वह गुण (आत्मा में) इसमें नहीं, इसलिये उनद्रव्य स्वरूप आत्मा नहीं। न्याय से लोजिक... बाहर में धर्म के नाम पर दूसरे रास्ते चढ़ा दिया बिचारे लोगों को। तत्त्व अंदर क्या वस्तु है। अस्तित्वरूप में मौजूदगी चीज अंदर अनादिअनंत है और वह अपने गुणवाली, शक्तिवाली है। वह दूसरों के गुणवाली नहीं इसलिये वह दूसरे द्रव्यों का जिसमें अभाव है। (ऐसी है)... आहा !

और वह कैसा है ? इसका आखरी बोल... `अनंत अन्य द्रव्यों के साथ अत्यंत एक क्षेत्रावगाहरूप रहने पर भी' क्या कहते हैं ! भगवान यह चेतन वस्तु जानने देखने (वाली)... अन्य दूसरे द्रव्य एक जगह रहते हैं। देखो न ! यह शरीर यहाँ

है, वाणी यहाँ है, आत्मा यहाँ है, दूसरे तत्त्व भी यही है। इसप्रकार एक जगह आत्मा और दूसरे पदार्थ रहने पर भी... है ? `एकक्षेत्रावगाह (अर्थात) एक क्षेत्र में रहने पर भी' `अपने स्वरूप से नहीं छूटने पर', स्वयं स्वयं के स्वरूप से कभी छूटता नहीं। यह चैतन्य स्वरूप है। जानना देखना जिसका स्वरूप है, वह दूसरे अन्य द्रव्यों के साथ एक जगह मिले हुये रहने पर भी अपने चैतन्य स्वरूप से उसका नाश नहीं होता। आहाहा ! बहुत सूक्ष्म बात भाई ! अभी तो (बहुत) कहना है। फिर उसका स्वसमय और परसमय। यहाँ तो अभी `जीवो' - ऐसा है, इतनी बात सिद्ध करते हैं। आहा !

`फिर भी अपने स्वरूप से नहीं छूटने से जो टंकोत्कीर्ण चैतन्य स्वभावरूप है' जाननस्वरूप अस्तिरूप में, सत्‌रूप में, शाश्वत (जिसकी) शुरूआत नहीं, आदि नहीं, अंत नहीं - ऐसा चैतन्य स्वरूप जिसका गुण है। - ऐसा आत्मा अनादि से है। आहाहा !

`है' उसकी शुरूआत नहीं होती `है' उसका नाश नहीं होता। `है' वह अपने गुणों से खाली नहीं होता... यह तो सभी महासिद्धांत हैं। आहाहा ! टंकोत्कीर्ण अर्थात जैसा है वैसा अनादि से चैतन्य स्वभावरूप है। `इस विशेषण से वस्तु स्वभाव का नियम बताया' वस्तु स्वभाव की स्थिति जिसप्रकार हो उसप्रकार बताया - ऐसा जीव नामका पदार्थ समय है। समुच्चय बात की। अंदर वस्तु चैतन्यस्वरूप और चैतन्यगुणवाला तत्त्व, इससे दूसरे तत्त्व दूसरे गुणवाले... उनगुणों का इसमें अभाव है इसलिये, उन द्रव्यों का भी इसमें अभाव है। एक जगह रहने पर भी अपने स्व चैतन्यगुण से कभी भी, `छूटता नहीं' पररूप होता नहीं वह स्वपना छूटता नहीं। आहाहा !

शरीर, शरीर रूप रहा हुआ है, वह शरीर आत्मापने होता नहीं, और उसे शरीर का शरीरपने से अभाव होता नहीं। इसीप्रकार आत्मा, आत्मापने रहता है, वह शरीररूप होता नहीं, और अपने स्वभाव से रहित होता नहीं। आहाहा ! है तो लोजिक, परंतु सूक्ष्म बहुत बापू ! अभी तो...? स्थूल चलता (है) परन्तु मार्ग सूक्ष्म बहुत बापू ! जन्म मरण रहित होने का पंथ, बहुत अलौकिक है। आहाहा !

अब - ऐसा जो जीव `सर्व पदार्थों के स्वभाव को प्रकाशने में समर्थ - ऐसा केवलज्ञान'... अब क्या कहते हैं ? आत्मा में केवलज्ञान जब उत्पन्न होता है,... पूर्णज्ञान क्योंकि पूर्ण ज्ञान स्वरूप प्रभु है ज्ञानस्वरूप कहा न ? चैतन्य स्वरूप है। तब चैतन्य स्वरूप है। अर्थात् पूर्ण चैतन्य स्वरूप है, पूर्ण चैतन्य स्वरूप अर्थात् सर्वदा स्वभावी है उसका जिसने ध्यान करके, जिसकी दशा में केवलज्ञान (प्रगटा)... एक समय में तीनकाल, तीनलोक जानने में आता - ऐसा जो केवलज्ञान उत्पन्न हो... `इस केवलज्ञान को उत्पन्न करनेवाली भेदज्ञान ज्योति का उदय होने से'... आहाहा !

अर्थात क्या कहते हैं ? कि चैतन्य स्वरूप जो अंदर है वह इस शरीर, वाणी से भिन्न भेदज्ञान और पुण्य और पाप के विकल्प के वृत्तियाँ राग उनसे भिन्न - ऐसा राग और पर से भेदविज्ञान प्रगट होने से,... पर से भिन्न करने की भेदज्ञान की कला प्रगट करने से... एक तो जीवद्रव्य सिद्ध किया, दूसरे द्रव्य सिद्ध किये, इसमें (आत्मा में) दूसरे द्रव्यों के गुण नहीं, इसलिये दूसरे द्रव्य भी इसमें नहीं और अपना चैतन्य स्वभाव है, यह एक जगह दूसरे तत्त्व रहे हुए होने पर भी अपने स्वभाव को छोड़ता नहीं।

अब इस स्वभाव की पूर्ण प्राप्ति जब होती है... उसे केवलज्ञान-सर्वज्ञज्ञान कहते हैं। जैसे लेंडी पीपल में ६४ पुरी चिरपिराहट भरी है। छोटी पीपल-छोटी पीपल, कद में छोटी, राग में काली, परंतु उसका चरपरा स्वभाव १००% है। अतः १०० बार घिसने पर १००% चरपरापन बाहर आता है। छोटी पीपल में चिरपराहट होती है न ? परंतु यह अंदर थी वह चोंसठ पुरी शक्ति... चोंसठ पुरी प्रतिशत अर्थात रूपया सोलह आना (पूरा) उस छोटी पीपल में भी चोंसठ पुरी अर्थात पूरापूरा चरपरापना था। इसलिये घिसने से बाहर आया है। लकड़ी को और कोयले को १०० बार घिसें तो ६४ पुरी चरपराहट बाहर नहीं आये कारण कि उसमें वह नहीं। परंतु इस पीपल में तो (चिरपरापन) है। है ? रूपया-रूपया पूरा। हरा रंग और चिरपरापना पूर्णता, यह एक लेंडी पीपल के दाने में पड़ी है। तो है... वह बाहर आती है। प्राप्त की प्राप्ति है।

इस प्रकार भगवान आत्मा... उसमें यह सर्वज्ञस्वभाव शक्ति-गुण है। सर्वज्ञ कहो कि पूरण ज्ञान कहो १००% अर्थात पूरण ज्ञान कहो। आहाहा ! पीपल की बात बैठती है परंतु यह (ज्ञायक की) बात। आहाहा ! पूरण ज्ञान अंदर है (आत्मा में) ६४ पुरी अर्थात रूपया सोलह आना। - ऐसा पूर्ण ज्ञान और पूर्ण आनंद स्वरूप प्रभु को जब वर्तमान में केवलज्ञान होता है तीनकाल, तीनलोक को जाननेवाला ज्ञान, `**ऐसे केवलज्ञान को उत्पन्न करनेवाली भेदज्ञान ज्योति का उदय होने से।** आहाहा ! भाषा देखो न कितना स्पष्ट किया है। किसी आत्मा को केवलज्ञान पूरणज्ञान प्रगट करने के लिये किसी दया दान भक्ति पूजा के पुण्य भाव काम करते नहीं। उनसे तो भेद विज्ञान, यह राग और पर द्रव्य से भेद भिन्न करने के भेदज्ञान, और स्वयं भेद है, इसलिये पर से भेदविज्ञान ज्योति प्रगट करने से उस भेद विज्ञान ज्योति से उसकी पर्याय में वह जिसप्रकार छोटी पीपल में चौषठ बार घिसने से जो अंदर शक्ति थी, प्राप्त की प्राप्ति ६४ पुरी चिरपराहट आती है। इसीप्रकार भगवान आत्मा को राग और पर से भिन्न करके अंतर में एकाग्रता करने से जो शक्ति में सर्वज्ञ

स्वभाव है वह पर्याय में सर्वज्ञपना उसे प्रगट होता है।

यह सभी सिद्धांत... ऊँचे है। यह तो कोलेज है। वस्तु (स्वरूप) यदि पहले जानना हो तो यह इसका (स्वरूप) समझ आये। आहाहा ! क्या कहा यह ? कि जैसे यह पिपल में ६४ पुरी चरपराहट भरी है, वह घिसने से बाहर आती है, इसीप्रकार आत्मा में सर्वज्ञ स्वभाव, `ज्ञ' स्वभाव पूरा भरा है, उसे दया-दान के विकल्प और शरीर, वाणी से भिन्न करनेपर, भिन्न होनेपर, भेदज्ञान करनेपर... उसमें पूरा जो भरा है उस तरफ की एकाग्रता से, पर से भिन्न करके, और स्व में एकाग्र होने पर, वह छोटी पीपल जैसे वर्तमान में कठोर और कम चरपरी है उसे घिसने से, अल्प चिरपराहट को दूर करके और अंदर चिरपराहट पूरी भरी है, वह प्रगट होने पर... भरी थी वह प्रगट होती है, इसीप्रकार आत्मा में राग और दया दान के विकल्प आदि जो पुण्य पाप और शरीर उनसे भिन्न करना, उसमें पूर्ण स्वरूप भरा है, उसमें एकाग्र होनेपर वह केवलज्ञान अर्थात परमात्मदशा-मोक्षदशा उसे उत्पन्न होती है। आहाहा !

मोक्ष दशा उत्पन्न होने का उपाय (यह है) कि रागादि विकल्प है, वह दुःखरूप है, उससे मुक्त होना, और पूर्ण स्वभाव में एकाग्र होना। दुःख से मुक्त होना वह मुक्ति और उसके स्थान में अतीन्द्रिय आनंद और अतीन्द्रिय ज्ञान प्रगट होना वह अस्ति। आहाहा ! शब्द भी एक एक सूक्ष्म है। ख्याल है दुनिया की सभी खबर है। यह रास्ता अगल प्रकार का है भाई ! आहाहा !

`केवलज्ञान को उत्पन्न करनेवाली... लिखा है न ?' `सर्व पदार्थ के स्वभाव को प्रकाशने में समर्थ - ऐसा केवलज्ञान, पूरणज्ञान जब प्रगट होता है आत्मा में, तब वह सर्व पदार्थों के स्वभाव को प्रकाशने में समर्थ है। पहले तो यह सिद्धांत सिद्ध किया। दूसरा यह केवलज्ञान को उत्पन्न करनेवाली भेदज्ञान ज्योति प्रगट होने से... आहाहा ! व्यवहार करते करते केवलज्ञान होगा - ऐसा नहीं आया इसमें भाई ! यह दया, दान, व्रत, भक्ति पूजा ऐसे व्यवहार सदाचरण करो यह करते-करते सर्वज्ञपना मोक्ष होगा - ऐसा नहीं। आहाहा !

उनसे भिन्न करते हुये, स्वभाव जो परिपूर्ण है उसमें एकाग्र होते... इसमें से हटते और इसमें रहते। आहाहा ! `पर से खस, स्व में बस यह टूंकूटच, यह तेरे लिए बस'... आहाहा ! कठिन सिद्धांत है बापू ! आहाहा ! यह यहाँ कहते हैं पर से हटो, भेद करो, राग चाहे तो दयादान का हो परंतु उससे भिन्न... भेद करो और स्वरूप जो है उसमें बसो, एकाग्र हो। तब वह भेदज्ञान द्वारा केवलज्ञान की प्राप्ति, कि जो केवलज्ञान सर्व पदार्थों को जाननेवाला है वह केवलज्ञान उत्पन्न होगा। आहाहा !

जैसे ६४ पुरी चिरपराहटमें से ६४ पुरी चरपराहट बाहर आती है, इसीप्रकार

अंदर सर्वज्ञ स्वभाव में एकाग्र होने पर, और राग से भिन्न पड़ने पर सर्वज्ञ स्वभाव शक्तिरूप है वह पर्याय में अवस्था में प्रगट होता है। आहाहा ! समझ में आया ?

ऐसी बात है भाई ! बहुत लोग तो कहीं बाहर में अटके हैं। भगवान की भक्ति करें ईश्वर की भक्ति करे न ! अब ईश्वर की भक्ति करे यह तो राग है और तुम्हारा माल वहाँ कहाँ है कि वहाँ से आये ? तुम्हारा तो यहाँ पड़ा है अंदर। जो कुछ प्रगट करने की तुम्हें धर्मदशा शांत दशा प्रगट करने की भावना हो, तब वह शांत दशा ? तुम्हारी शांत दशा क्या भगवान के पास है ? तुम्हारी शांत दशा प्रगट करने की शांति से भरा हुआ तत्त्व तुम्हारा है। प्राप्त की प्राप्ति है 'है' उसमें से आयेगी। भगवान के पास से उसमें से तुम्हारा आयेगा ? समझ में आया ? आहाहा ! इन दो लाइनों में तो बहुत है। आहाहा !

- ऐसा जो जीव कहा... जीव कहो कि आत्मा कहो। 'सर्व पदार्थ के स्वभाव को प्रकाशने में समर्थ' आहाहाहा ! प्रभु ! आत्मा को जब केवलज्ञान होता है... अकेला ज्ञान प्रगट रहता है, विकार नहीं और अल्पज्ञता नहीं। पूर्ण ज्ञान होता है जब आत्मा को, वह केवलज्ञान है। वह केवलज्ञान सर्व पदार्थों के स्वभाव को जानने में समर्थ है। वह केवलज्ञान राग और परद्रव्य से भिन्न आत्मा को भिन्न जानने पर हुआ, जिसमें यह ज्ञानपना पूरा भरा है, उसमें एकाग्र होने से, पर से एकाग्रता छूटने पर स्व में एकाग्रता करनेपर वह भेदज्ञान की ज्योति से केवलज्ञान उत्पन्न होता है। आहाहा !

भेदज्ञान कहो कि मोक्षमार्ग कहो, केवलज्ञान कहो कि मोक्ष कहो (एकार्थ है) आहाहा ! इसमें कितना याद रहे ? सब अन्जान जैसा लगे, जगत की सब बातों की खबर है। बापू मार्ग कोई भिन्न है भाई... धरम, यह धरम प्रगट होना... धरम अर्थात आत्मा की शांति, वीतरागता, निर्दोषता, स्वच्छता वह प्रगट होना वह कहाँ से प्रगट हो ? कहते हैं कि पर से, हटकर, पर से भिन्न होकर और जिसमें यह शक्तियाँ भरी हैं उसमें एकाग्रता होने पर, वह स्वच्छता से भरपूर भगवान है, वह प्रभु अतीन्द्रियज्ञान से पूरा भरा है निजात्मा। अतीन्द्रिय आनंद के स्वभाव से भी परिपूर्ण प्रभु है। आहाहा !

जो वस्तु हो, उसका स्वभाव अपूर्ण नहीं होता। पूरण स्वभाव से भरा हुआ भगवान (आत्मा) उसमें एकाग्र होने से और पर से भिन्न पड़ने से... अस्ति नास्ति की, पर से नास्ति और स्व से अस्ति, उसमें एकाग्रता- ऐसा जो भेदविज्ञान वह मोक्ष नाम पूरणज्ञान उत्पन्न होने का कारण है। आहाहा ! इसके लिये अब फुरसत किस दिन मिले ? सारे दिन 'धंधा पानी पत्नी-बच्चे सम्हालना, धंधा करने में... अभी धरम तो नहीं परंतु पुण्य का भी ठिकाना नहीं कि दोचार घण्टे सत्य ऐसी चीज है - ऐसा पढ़ना, विचारना, सुनना, इतना ही समय न मिले। हिम्मतभाई ! आहाहा !

यहाँ तो एकदम भगवान आत्मा को सिद्ध किया `**जीवो**' आहाहा ! - ऐसा- ऐसा है गुणपर्यायवाला, उत्पादव्ययध्रुववाला, दर्शनज्ञान स्वरूप वगैरह यह जीव... ***दूसरे तत्त्व है, दूसरे तत्त्व न हों तो दूसरे तत्त्वों के लक्ष्य से विकार होता है वह विकार न हो। अपने स्वभाव के आश्रय से विकार नहीं होता। क्योंकि स्वभाव में विकार है ही नहीं।*** इसलिये जो विकार होता है पुण्य और पाप का, वह परद्रव्य के लक्ष्य से होता है। इसलिये परद्रव्य और परद्रव्य के गुण का जिसमें अभाव है अर्थात इसे पर द्रव्य का लक्ष्य करना ही नहीं। आहाहा !

तुम्हारे में ही भरे हुये... उस पीपल में जैसे हरा रंग भरा हुआ है, काले रंग का नाश होकर वह हरा प्रगट होता है। अंदर भरा है। हरा कहीं बाहर से आता नहीं। हरी होती है न वह पीपल को घिसो तब, हरा रंग, हरा रंग उसमें रंग रहता है वह बाहर आता है।

इसप्रकार प्रभु आत्मा में हरा नाम अनंतज्ञान... आहाहा ! और चिरपरा नाम अनंत आनंद, अनंत वीर्य, अनंत दर्शन, अनंत स्वच्छता अनंत प्रभुता... ऐसी शक्ति से भरा हुआ जीवतत्त्व है। उसे केवलज्ञान अर्थात् मुक्ति प्राप्त करनेवाले को पर द्रव्य से भिन्न करके, अपने पूरण स्वभाव में पूर्ण पर्याय प्रगट करने के लिये, अपने पूरण स्वभाव में एकाग्र होने पर वह भेदज्ञान से केवलज्ञान उत्पन्न होता है। आहाहा ! ईश्वर की भक्ति और करोड़ों रूपया का दान (करे) और माला जपे माला, णमो अरहन्ताणं णमो अरहंताणं... वह सभी विकल्प और राग है, उससे तो भेद करे, भिन्न करे, क्योंकि स्वरूप में वह राग नहीं है स्वरूप में तो ज्ञानदर्शन तथा आनंद से भरा हुआ स्वरूप है। वह राग से खाली है और शुद्ध स्वभाव से भरा हुआ है। ***आहाहा ! वस्तु जो हो वह अपने स्वभाव से अपूर्ण नहीं हो, और वस्तु जो हो उसमें विकार न हो विकार तो उसकी वर्तमान दशा में होता है त्रिकाली में नहीं होता, त्रिकाली में जो विकार हो तब विकार किसी दिन मिटे नहीं और सुखी किसी दिन हो नहीं। आहाहा !***

`सर्व पदार्थों के स्वभाव को प्रकाशने में समर्थ - ऐसा केवलज्ञान'। यह तो केवलज्ञान की सिद्धि की। कोई - ऐसा कहे कि आत्मा को तीनों कालों का ज्ञान होता ही नहीं। सर्व पदार्थों के स्वभाव को जाननेकी शक्ति आत्मा में है ही नहीं, उसे यहाँ झूठा ठहराया है। आहाहा !

भाई वास्तव में तो तुम्हारा `ज्ञ' स्वभाव है न `ज्ञ' `जानना' यह स्वभाव है न ! यह किसका स्वभाव है। शरीर का ? राग का ? कर्म का ? यह जानना तो चैतन्य का स्वभाव है, आत्मा का और जिसका जो स्वभाव है यह `ज्ञ' स्वभाव वह अपूर्ण न हो, जिसका स्वभाव है अपना भाव वह अपूर्ण न हो, विपरीत न हो। आहाहा !

यह पूरण स्वरूप है यह पूर्ण शक्तिरूप पूरण स्वभाव है ! उसे राग दया-दान विकल्प से भी भिन्न करके, क्योंकि उसमें पूर्ण होने की शक्ति नहीं। राग में व्यवहार में; पूरण होने की शक्ति नहीं। वह शक्ति तो स्वभाव में है। इसलिये स्वभाव में एकाग्र होने पर, त्रिकाली चैतन्य स्वभाव में एकाग्र होनेपर, और राग की पुण्य पाप की क्रिया से भिन्न होते, जो सर्वपदार्थों को प्रकाशने में समर्थ है वह भेदज्ञान ज्योति से केवलज्ञान होता है। आहाहाहा !

इसमें कितना याद रखना ? सभी नये सिद्धांत लगें... नये नहीं, बापू ! तुम्हारा स्वरूप ही यह है। तुमने जाना नहीं अपने को, यह चीज अभी सभी लुप्त हो गई है आहाहा ! वह अब बाहर आती है। आहाहा !

भाई तुम कौन हो ? जैसे उस पीपल में १००% अर्थात रूपया पूरा रूपया कहों, सोलह आना, पूरण स्वभाव से भरी हुयी चिरपराहट वह वस्तु है, इसीप्रकार यह भगवान आत्मा वस्तु है यह सोलह आना अर्थात पूरण ज्ञान और आनंद से भरी हुयी शक्तिवाला यह तत्त्व है। आहाहा ! इस शक्ति में एकाग्र होने पर, जब इस शक्ति में एकाग्र होना है तब पर तरफ से खिसक जाना है, पर तरफ से भिन्न पड़े बिना, स्व में एकाग्र नहीं हो सकते और शक्ति में एकाग्र हुये बिना उसकी दशा में परिपूर्ण ज्ञान और परिपूर्ण आनंद कभी भी प्रगट नहीं होगा ! समझ में आया ?

प्रवीण भाई ? ऐसी बातें है, दुनियाँ को पागल जैसा लगे - ऐसा है। पूरी लाइन में फरक है, हैं ? पूरा मार्ग भिन्न है बापू, तुम्हें ख्याल नहीं भाई ! अनंत काल का अनजान मार्ग... उसे यहाँ जानने को कहा है। पूर्ण की प्राप्ति इससे होगी। पूरण परमात्मा दशा जनम-मरण रहित दशा, यह राग से भिन्न और पूरण स्वभाव में एकाग्रता... इससे होगी। आहाहा !

इसमें तो कोई कुछ माने और कोई कुछ माने इसप्रकार अज्ञानी अनादि से भ्रम में पड़ा है, परिभ्रमण करके, चौराशी के अवतार... कौए और कुत्ते के अवतार कर करके, मुश्किल-मुश्किल से मनुष्यपना मिला हो, उसमें यह रीति नहीं समझे, अंत में वही के वही अवतार है। आहाहा !

यहाँ तो इस अवतार को अभाव करने का उपाय बतलाते हैं। आहाहा ! कि जिसमें यह भव और भव का भाव जिसके स्वरूप में नहीं, जिसके स्वभाव में तो परिपूर्ण ज्ञान आनंद है। आहाहाहा ! भाई, तुम वस्तु हो, वस्तु है उसमें शक्ति और गुण बसे हुये-रहते हैं। यह शक्ति-गुण बिना वस्तु हो सके नहीं, और पूरिपूर्ण आनंद ज्ञानादि परिपूर्ण गुण और शक्ति है। तो जो तुम्हारी चीज में नहीं - ऐसा यह शरीर, वाणी, मन, पुण्य-पाप के भाव, उनसे भिन्न होकर और तुम्हारे में जो पूर्ण पड़ा है,

इसमें उसका आदर करके, उसमें एकाग्र होकर, तुम्हें तुम्हारी दशा में केवलज्ञान, मुक्त दशा, दुःख से मुक्त और आनंद ज्ञान से सहित होगी तुम्हारी दशा। आहाहा !

दो पंक्तियों में तो बहुत भरा है, अकेले सिद्धांत ही हैं। आहाहा !

`जब यह जीव'... - ऐसा कहा न ? जीव की व्याख्या तो की जब यह जीव स्वयं करे तब, कोई कर दे या कोई करा दे- ऐसा है ही नहीं। आहाहा ! `जब यह आत्मा, सर्वपदार्थों के स्वभाव को प्रकाशने में समर्थ - ऐसा केवलज्ञान सर्वज्ञ ज्ञान'... यह पूर्ण ज्ञान प्रगट करे तो इसका अर्थ है कि अंदर पूर्ण ज्ञान है। अन्दर में केवल... केवल... पूर्ण एक ज्ञान स्वरूप ही प्रभु है। आहाहा ! अस्ति चैतन्य स्वरूप पूर्ण, ज्ञान और आनंद से पूर्ण है। वह वस्तु... उसका जिसका आदर करना हो, उसे रागादि का आदर छोड़ देना, अर्थात कि इससे भिन्न पड़ना। आहाहा ! चाहे तो दया, दान व्रत भक्ति पूजा हो, यह भी एक राग है, विकल्प है, वृत्ति है (श्रोता :- यह सुनना भी राग है) सुनना भी राग है और कहना भी राग है। आहाहा !

यह तो जन्ममरण रहित होने की बातें है प्रभु ! जन्ममरण तथा चौरासी के अवतार कर करके अनंत अवतार करे, वस्तु है न स्वयं, है तो कहाँ रही अभी तक आत्मा तो है, वह रही चार गतियों के परिभ्रमण में रही। यह कौआ और कुत्ते के भव कर करके नरक के निगोद के और मनुष्य के... आहाहा ! और एक गति में कहीं भी जाय वहाँ दुःख ही है पराधीनता है, स्वर्ग हो तो भी दुःख है पराधीनता है। अरबपति सेठ धूल के धनी कहलाते हैं वह बेचारे सभी दुःखी हैं। आहाहा ! दुःखी हैं बिचारे। आहाहा ! (श्रोता :- पैसा है तब भी बेचारे) पैसा चाहिए है न इनको ? आत्मा चाहिए नहीं, उन्हें यह धूल चाहिए है। यह लाओ, वह लाओ। यह लाओ यह मांगनेवाले भिखारी हैं। अंदर में अनंत आनंद और अनंतज्ञान भरा है। ऐसी लक्ष्मीवाला प्रभु (स्वयं) है अंदर, उसके पास जाता नहीं। जहाँ मिल सकता है वहाँ जाता नहीं। जिसमें से आये नहीं, वहाँ जाकर मांगते रहते हैं और पैसा आये तो वह कोई इसके पास तो आता नहीं। उसके पास तो ममता आती है कि मुझे पैसा आया, कि मुझे पैसा आया, कि मुझे पैसा मिला, ऐसी ममता (अपनापना) पैसा, पैसा में रहता है, जड़ में। आहाहा !

तथा यह तो ऐसी वस्तु है न ! तो यहाँ पूर्णज्ञान प्रगट करने का उपाय कहते हैं न ? तो वह पूर्णज्ञान प्रगट करने के समय की दशा... ऐसी तो अनंती शक्ति जिसमें हो, उसमें एकाग्र हो तो केवलज्ञान हो। आहाहा ! अकेला केवलज्ञान एकही पर्याय हो तो उसमें से पर्याय एक ही आये तो दूसरे समय क्या हो ? आहाहा ! एक सेकेण्ड के असंख्य भाग में, छोटे में सूक्ष्म समय में, तीनकाल तीनों लोक को

जाने ऐसी आत्मा में शक्ति, पर्याय में प्रगट होती है, उसे केवलज्ञान कहते हैं। ऐसी तो अनंती अनंती शक्तियाँ अंदर में पड़ी हैं। अन्यथा एक ही पर्याय बाहर आए और इतना ही हो (तब तो) खाली होजाय तो फिर समाप्त होगया। - ऐसा किसी दिन बने नहीं। आहाहा !

सत्य के सिद्धांत बहुत कठिन हैं, बापू ! आहाहा ! अभी तो लोगों (को) धरम के गुरुओं ने कहीं का कुछ चला करके चढ़ा दिया है सभी खबर है दुनियां की आहाहा !

सत् प्रभु है और जो है वह शक्ति बिना का नहीं होता, अर्थात उसके गुण बिना का, स्वभाव बिना का, वह तत्त्व नहीं होता। जैसे (वस्तु) `है' इसीप्रकार उसके गुण भी, शक्ति भी त्रिकाल है। जैसे द्रव्य पूर्ण है उसी प्रकार उसके गुण भी पूर्ण हैं - ऐसा भगवान आत्मा। आहाहा ! अरे ! इसे विश्वास कैसे बैठे ? यहाँ पाँच पचास हजार जहाँ पैसा मिले वहाँ राजी होजाये, धूल में। (श्रोता :- साधारण मनुष्य सेठ हो तो खुशी हो)

मूर्ख है इसलिये खुशी होता है। मूर्ख है तथा मूर्ख किसे कहें ? प्रभु तो अंदर आनंद से भरा है उसकी लक्ष्मी का पार नहीं, अमाप और अमाप और अमाप अपरिमित, अपरिमित अर्थात जिसमें मर्यादा नहीं - ऐसा स्वभाव है बापू ! (जो) जिसका स्वभाव होता है उसकी मर्यादा नहीं होती।

- ऐसा जो आत्मतत्त्व जिसमें अपरिमित, मर्यादा बिना का स्वभाव और शक्तियाँ पड़ी हैं, उसे विश्वास (में) लेकर तथा पुण्य और पाप के भाव एवं बाहर के उनके फल... उनका विश्वास छोड़ दो। आहाहाहा ! उसमें मैं नहीं, उससे मुझे कुछ लाभ नहीं। आहाहा ! जिसमें मैं हूँ उससे मुझे लाभ है। - ऐसा अपना स्वभाव जैसे अनादि से स्वभाववान है, उसीप्रकार उसका स्वभाव... स्वभाववान हो और स्वभाव न हो ? शक्कर हो और मिठाश न हो - ऐसा बने ? (कभी न....) इसीप्रकार आत्मा स्वभाववान है और उसका स्वभाव आनंद और ज्ञान न हो - ऐसा तीनकाल में बने नहीं। आहाहा ! और जिसका स्वभाव होता वह परिपूर्ण होता है। स्वभाव, अपना भाव, अपना सत्व, अपनी शक्ति, अपना गुण, अपना स्वभाव। आहाहा ! ऐसे आत्मा में एकाग्र होने से और राग तथा शरीर की क्रिया से भिन्न होने पर उसे सर्व पदार्थों को प्रकाशने में समर्थ ऐसी केवलज्ञान ज्योति प्रगट होती है।

कल वह भाई कर रहे थे न ! शुभ राग, दया, दान, व्रत शुभराग ? सभी व्यक्तियों ने धरम मना दिया है। वृत्ति उठती है, वृत्ति विकल्प है राग है। आहाहा ! उससे भिन्न होने पर, स्वरूप में अभिन्न होनेपर `पर से विभक्त और स्व से एकत्व'

तीसरी गाथा में कहेंगे। आहाहा ! समझ में आया ?

अब इसमें देव-गुरु-शास्त्र से भी मिले - ऐसा नहीं - ऐसा यहाँ आया है। यहाँ तो जो यह गुण है, वह इसमें नहीं और उसके गुण जो है वह इसमें नहीं। तब जहाँ गुण है वहाँ जाये तो मिले, वह गुण वहाँ नहीं उनके पास। (श्रोता :- भले वह जानता नहीं तो उसे बतानेवाला तो चाहिए न ?) बतानेवाला चाहिए परंतु `जाननेवाला जाने' तब बतानेवाले ने बताया - ऐसा कहलाये देखो न ? यह नरिया कवेलू सोने के हो(गये) लो - ऐसा सुबह नहीं कहते ? सूरज उग गया (हो) और वह उठे नहीं। वह (नरिया) कवेलू सफेद होगये हों। तथा सूरज उगे तो... (श्रोता :- वह धूप हुयी हो।) वह धूप हुयी, तो यदि कवेलू सोना के हों परंतु किसे ? जो देखे उसे कि न देखे उसे ? उन्हें तो कहा कि हे भाई सोने के कवेलू हो गये अब तो उठो कब तक सोते रहोगे ? अर्थात क्या ? नरिया स्वच्छ हों, सूर्य के प्रकाश से परंतु देखनेवाले को ख्याल पड़े कि आँख (वंद कर के सोनेवाले को खबर पड़े ?) कमरा एक हो, दरवाजा एक हो और तीन रजाई ओढ़ी हों, आँखों में कीचड़ भरा हो अब वह किस प्रकार देखे यह ? आहाहा ! समझ में आया कुछ... ?

यह सभी उदाहरण शास्त्र में है हो ? एक एक उदाहरण। इसप्रकार अनादि से मिथ्यादर्शन ज्ञान अज्ञान की (भ्रमणा) उसका कीचड़ तो लगा है अंदर, आंखें तो बंद हैं और कमरा एक ही है दरवाजा खोलकर उसके सामने देखता नहीं, तब उसे सफेद कवेलू कहाँ से दिखे ? आहाहा ! इसप्रकार यह भगवान आत्मा अज्ञान तथा रागद्वेष में सो रहा है, उससे - ऐसा कहें कि यह चैतन्यप्रकाश का पुण्ज अंदर पड़ा है न ? आहाहा ! परंतु बतानेवाले ने बताया परंतु देखनेवाले को देखे बिना विश्वास कहाँ से बैठे ?

वह गुण तो वही है, चैतन्य के सूर्य का तेज है, प्रभु तो चैतन्य तेज है। उस ***सूर्य के प्रकाशरूप तेज को अपने तेज की खबर नहीं। (सूर्य के) प्रकाश की खबर तो इस (आत्मा के) प्रकाश (ज्ञान) को खबर है, चैतन्य प्रकाश जानता है कि यह जड़ प्रकाश है। मैं चैतन्य प्रकाश हूँ।*** आहाहा !

परंतु इसे उसकी महिमा आयी नहीं न ? आत्मा अर्थात क्या तथा कितना तथा क्यों इसकी ऐसी दशा पूर्ण प्रगट हो वह कैसी, कितनी होगी किसी दिन `सुना नहीं, स्वीकार नहीं, फुरसत नहीं, बाईस तेईस घण्टे तो बीबी-बच्चे धंधा और पाप में रूका है। घंटे दो घंटे मिलें तो उसको कुगुरु मिल जायें, जो दूसरे (खोटे) रास्ते में लगा दे। जहाँ है (मार्ग) वहाँ न जायें, और जो (मार्ग) नहीं है उसमें लगा दे उसे, यह पुण्य करो, दान करो, व्रत करो भक्ति करो, जिसमें आत्मा नहीं, और उसमें

से प्रगटे - ऐसा नहीं, उसमें चढ़ा दिया उसे। आहाहा ! सूक्ष्म तो लगे भाई ! आहाहा !

'भेदज्ञान ज्योति का उदय होने से' भाषा देखो ! यह उदय... श्रीमद प्रयोग करते है न ? 'उदय होता चारित्र का... उदय नाम प्रगट। आहाहा ! अस्ति है वस्तु है ***आत्मा तो (है) उसकी शक्ति कुछ स्वभाव होगा कि नहीं ? तो जिसप्रकार यह वस्तु स्वयं एकरूप है, पर के अभावस्वभावरूप है; इसीप्रकार इसकी शक्तियाँ एकरूप पूर्ण है और वह भी पर के भाव के अभाव स्वभावरूप है...*** आहाहा !

- ऐसा भगवान आत्मा, सर्वोत्कृष्ट स्वयं परमात्म स्वरूप ही शक्ति से स्वभाव से है। उसमें एकाग्र होने से और राग की क्रिया शरीर की क्रिया और बाहर की क्रिया से भिन्न करके, जुदा करके, केवलज्ञान उत्पन्न करनेवाली भेदज्ञान ज्योति का उदय होता है। आहाहाहाहा !

परन्तु बाहर में क्या करना, इसमें ? आहाहा !

बाहर का कुछ भी करोगे (तो भी) अंदर का मिले - ऐसा नहीं... लो सुनो। (श्रोता :- परंतु बाहर का कहाँ कर सकता है ?) बाहर में है कहाँ, तुम हो कहाँ ? शरीर में हो ? वाणी में ? जड़ पैसे में ? अरे पुण्य-पाप के शुभ-अशुभ भाव होते उसमें आत्मा है (क्या) ? वह तो राग है। आहाहाहा ! न्याय से थोड़ा लोजिक से - पकड़ेगा कि नहीं ? ऐसे न ऐसी अंधी दौड़ ! अरेरे ! आंख बंद होने पर कहाँ चला जायेगा। देह की स्थिति पूरी हो जायेगी, परंतु आत्मा तो अविनाशी है, वह आत्मा भी साथ में नष्ट हो जाये - ऐसा तो नहीं। शरीर तो नाश हो जायगा यहाँ। भगवान तो - ऐसा का - ऐसा (अनादि अनंत रहेगा)।

और (अज्ञानी) यह हमारा, यह हमारा मानकर अज्ञानपने की पुष्टी करके चला जायेगा, भटकने चौराशी में। आहाहा... वहाँ कही धर्मशाला नहीं, कमजोरों को रहने का स्थान बना नहीं वहाँ मौसी बैठी नहीं है कि आओ भाई ! आहाहा !

जिसमें तुम हो... तुम्हारा स्वभाव है और उस स्वभाव से स्वभाववान खाली होता नहीं प्रभु ! यह स्वभाव पूर्ण है, एक एक गुण (पूर्ण) अनंत गुणों की क्या बात करें आहाहा ! जिसके गुणों की संख्या का अंत नहीं मिले। आहाहा ! वह हरेक गुण परिपूर्ण है और ऐसे परिपूर्ण गुण का पुंज प्रभु यह आत्मा है। इस आत्मा में राग से भेद विज्ञान करके, यह मार्ग है बापू ! दूसरे भले चाहे जिसप्रकार (दूसरे) रस्ते चढ़ाये जीवन चला जायेगा प्रभु, फिर मनुष्यपना अनंतकाल में मिलना मुश्किल होगा ? आहाहा !

दो पंक्ति में तो ओहोहोहो ! फिर कहते हैं... सर्व पदार्थों के स्वभाव को प्रकाशने में समर्थ- ऐसा केवलज्ञान अकेली पर्याय पूर्ण प्रगट हो उसे उत्पन्न करनेवाली भेदज्ञानज्योति

उसे पर से भिन्न करने की भेदज्ञान दशा... वह पूर्ण प्राप्ति का उपाय है। वह सर्व परद्रव्य से छूटकर... भेद कहा न ? भेदज्ञान कहा न ? तो सर्व परद्रव्य से छूटकर, पुण्य और पाप आदि के भाव होते, दया, दान आदि के भाव वह भी परद्रव्य राग है, उससे छूटकर, दर्शनज्ञानस्वभाव में निश्चित वृत्तिरूप... आहाहा !

जो ज्ञान-दर्शन-स्वभाव है उसमें नियत-निश्चय परिणतिरूप, अस्तित्वरूप आत्मतत्त्व के साथ एकत्वरूप प्रवर्तता हुआ वर्तता है। आहाहाहाहा ! जब यह भगवान आत्मा, परद्रव्य से छूटकर, अपने ज्ञान-दर्शन-स्वभाव में स्थिर रहे... नियत वृत्ति, निश्चयवृत्ति परिणति - ऐसा अस्तित्वरूप आत्मतत्त्व के साथ एकत्वगतपने वर्तता है, तब दर्शनज्ञानचारित्र, तीनों लेना है न फिर ? पाठ में 'चारित्रदर्शनज्ञान' था (यहाँ) फिर ले लिया था यह। (वह तो) पद्य को रचने के लिये... आहाहा !

सर्व परद्रव्यों से छूटकर, इसमें क्या बाकी रहा ? परमात्मा, देव-शास्त्र-गुरु उससे छूटकर... शिवलाल भाई ! केवली, गुरु यह पर द्रव्य ? इनके पिताजी ने प्रश्न किया था सम्वत् २०१० में, चौबीस वर्ष हुये... बोटाद में नगरनिगम के मकान में व्याख्यान चलता था, दश की साल... यह प्रश्न किया कि देव-गुरु-शास्त्र भी पर ? शुद्ध है, वह पर ? लाख बार पर। यहाँ सभी द्रव्य पर कहे हैं न ? इसमें (क्या) देव-गुरु-शास्त्र बाकी रखे ? आहाहा ! सर्व परद्रव्यों से छूटकर आहाहा ! दर्शन-ज्ञान-स्वभाव स्वयं का.... इसमें ज्ञान-दर्शन-चारित्र है न ? नियतवृत्तिरूप - ऐसा अस्तित्वरूप आत्मतत्त्व के साथ एकत्वपने वर्तता है, तब उसे दर्शन-ज्ञान-चारित्र में स्थित होने से... आहाहाहा ! अंतर स्वरूप श्रद्धा में वर्तता, ज्ञान में वर्ते और स्थिरता में वर्ते, तब वह आत्मा दर्शन-ज्ञान-चारित्र में आया, इसलिये उसे स्वसमय अर्थात सच्चा आत्मा कहा जाता है। आहाहा ! स्वसमय उसे कहें, उसे आत्मा कहें। आहाहाहा !

(आत्मा) है तो परंतु परिणति में श्रद्धा ज्ञान चारित्र में आये तब उसे हैं ऐसे आत्मा (को) स्वसमय कहें... - ऐसा कहते हैं। क्या कहा यह ? है तो है। आहाहा ! वस्तु तो है अनंत आत्मायें अंदर मौजूद हैं... परंतु उसकी तरफ की प्रतीति, ज्ञान और रमणता, पूर्णानंद के नाथ में श्रद्धा, ज्ञान और चारित्र की परिणति करे... उसे सच्चा आत्मा कहते हैं और वह स्वसमय नाम आत्मा, आत्मरूप हुआ - ऐसा उसे कहा जाता है और उसे धर्मी कहा जाता है। विशेष कहेंगे... (प्रमाण वचन गुरुदेव !)